रेगुलेटिंग एक्ट (Regulating Act, 1773 ई०)

भारत में कंपनी का शासन बंगाल, बिहार और उड़ीसा से आरंभ हुआ। 1764 ई० में बक्सर के युद्ध के पश्चात उन्होंने मुगल बादशाह से इन सूबों की दीवानी प्राप्त की और क्लाइव ने इन सूबों में द्वैध-शासन स्थापित किया। द्वैध शासन से न केवल इन सूबों की स्थिति दयनीय हो गयी बल्कि कंपनी की आर्थिक स्थिति भी शोचनीय हो गई जिसके कारण कंपनी को अंग्रेज सरकार से कर्ज मांगना पड़ा। ब्रिटिश संसद ने 14,00,000 पौंड का कर्ज तो कंपनी को दे दिया गया परंतु साथ ही भारत में कंपनी के शासन में सुधार हेतु 1773 ई० में एक कानून भी बनाया जिसे रेगुलेटिंग एक्ट पुकारा गया।

इस एक्ट की निम्नलिखित धाराएँ थीं:

1) बंगाल के गवर्नर को भारत का गवर्नर-जनरल बनाया गया तथा मद्रास और बम्बई के गवर्नर उसके अधीन कर दिए गए।

2) गवर्नर जनरल की सहायता के लिए चार सदस्यों की एक परिषद (Council) नियुक्त की गई, जिसमें निर्णय बहुमत से होता था। गवर्नर-जनरल केवल उसी समय निर्णायक मत दे सकता था,

जब परिषद के सदस्यों के मत बराबर संख्या में विभाजित हो जाए।

3) कलकत्ता में एक उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) की स्थापना की गई।

4) प्रोप्राइटरों (Proprietors) को मत देने की योग्यता 500 पौंड से बढ़ाकर 1,000 पौंड कर दी गई तथा मत देने का अधिकार केवल उन्हीं को दिया गया जो इस धनराशि को कम से कम एक वर्ष तक जमा रख सकते थे।

5) डायरेक्टर (Directors) चार वर्ष के लिए चुने जायेंगे जिनमें से एक चौथाई सदस्य प्रत्येक वर्ष त्यागपत्र देते रहेंगे और कम से कम अगले एक वर्ष तक डायरेक्टर नहीं बनेंगे। डायरेक्टरों को कम्पनी की धन-सम्बन्धी रिपोर्ट ब्रिटिश अर्थ-मंत्री (Chancellor of Exchequer) को तथा सैनिक और राजनीतिक कार्यों की रिपोर्ट अंग्रेज विदेश मंत्री (Secretary of State) को देनी होगी।

वस्तुतः कम्पनी पर संसदीय नियंत्रण के लिए ब्रिटिश जनता माँग कर रही थी।

कंपनी के मामलों की जाँच के लिए ब्रिटिश सरकार ने दो संसदीय समितियाँ नियुक्त की –

एक चयन समिति (Select Committee) और दूसरी गुप्त समिति (Secret Committee) (Secrecy)। दोनों समितियों ने कंपनी के विरुद्ध रिपोर्ट दी। 18 May 1773 को Lord North ने संसद में एक विधेयक पेश किया। अतः कंपनी की बुराईयों को दूर करने के लिए रेग्युलेटिंग एक्ट पास किया गया।

रेगुलेटिंग एक्ट के मुख्य उपबन्ध —

(i) मद्रास और बम्बई को बंगाल के प्रेसीडेंसी के अधीन किया जाना —
अब बंगाल के गवर्नर को तीन प्रेसिडेंसियों का जनरल नियुक्त किया गया। वह मद्रास एवं बम्बई के गवर्नरों को समय से पूर्व पदच्युत कर सकता था। गवर्नर जनरल को अन्य दो प्रेसिडेंसियों के शासन पर "निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार प्रदान किया गया।

(ii) बंगाल में एक प्रशासक मंडल का गठन —
बंगाल के गवर्नर वारेन हेस्टिंग्स को गवर्नर जनरल बना दी तथा इसकी सहायता के लिए एक परिषद की व्यवस्था की गई थी। जिसमें गवर्नर जनरल तथा चार पार्षद नियुक्त किए गए। इस परिषद में बहुमत से निर्णय होने थे और अध्यक्ष को केवल मत बराबर होने की अवस्था

से ही निर्णायक मत (Casting Vote) का प्रयोग कर सकता था। वारेन हेस्टिंग्स तथा फिलिप फ्रांसिस, क्लेवरिंग, मॉनसन तथा बारवेल ये काउंसिल ऑफ फोर (Council of four) कहलाते थे। ये लोग पाँच वर्ष के लिए नियुक्त किए गए और केवल कोर्ट ऑफ डाइरेक्टर्स की सिफारिश पर केवल ब्रिटिश सम्राट द्वारा ही हटाए जा सकते थे। बंगाल के गवर्नर को अब समस्त अंग्रेजी क्षेत्रों का गवर्नर कहा गया। सपरिषद गवर्नर जनरल को बंगाल में फोर्ट विलियम की प्रेसीडेंसी के सैनिक तथा असैनिक शासन का अधिकार दिया गया तथा इसे कुछ "विशेष" मामलों में मद्रास तथा बम्बई की प्रेसीडेंसियों का अधीक्षण भी करना था।

डाइरेक्टर्स के अधिकार—

गवर्नर जनरल और उसकी परिषद को डाइरेक्टर की आज्ञा का पालन करना पड़ता था। कंपनी के हित से सम्बन्धित मामलों की सूचना डाइरेक्टर्स को देते रहना पड़ता था। कंपनी के डाइरेक्टर्स को कहा गया कि वे भारत से राजस्व से संबंधित सभी मामलों तथा दीवानी तथा सैन्य प्रशासन के संबंध में किए गए सभी प्रकार के कार्यों से सरकार को अवगत कराएंगे। इस प्रकार पहली बार ब्रिटिश

कैबिनेट को भारतीय मामलों में हस्तक्षेप का अधिकार दिया। डायरेक्टर्स कम्पनी की दीवानी और राजस्व संबंधी मामलों के विषय में ब्रिटिश ट्रेजरी को सूचना देते थे इस प्रकार ईस्ट इंडिया कंपनी के मामलों में जो एक राजनीतिक संस्था थी संसद को हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया।

सपरिषद गवर्नर जनरल को कानून बनाने का अधिकार :
सपरिषद गवर्नर जनरल को कंपनी के अधीन क्षेत्रों में कुशल प्रशासन के लिए नियम, आदेश तथा विनियम बनाने का अधिकार दिया गया। किंतु इन कानूनों को लागू करने से पूर्व भारत सचिव से अनुमति प्राप्त करना अनिवार्य था। यह भारत सरकार को कानून बनाने के अधिकार की शुरुआत थी।
सपरिषद गवर्नर जनरल द्वारा निर्मित सभी अधिनियमों की स्वीकृति सर्वोच्च न्यायालय द्वारा आवश्यक थी। इसके लिए हर नियम को न्यायालय में रजिस्ट्रेशन कराना पड़ता था। इस प्रकार भारत में कार्यपालिका को न्यायालय के अधीन रखा गया। सपरिषद सम्राट को भी अधिकार दिया गया कि वह सपरिषद गवर्नर जनरल द्वारा बनाए गए नियमों को दो वर्षों के अंदर अस्वीकृत कर सकती थी।

१८

सर्वोच्च न्यायालय

अधिनियम के द्वारा बंगाल में 1774 ई० में एक उच्चतम न्यायालय की स्थापना कलकत्ता के फोर्ट विलियम में की गई। इस न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश तथा 3 अन्य न्यायाधीश थे।

1781 के तहत संशोधन करते हुए उच्चतम न्यायालय के न्याय क्षेत्र में को परिभाषित कर दिया गया। कानून बनाते तथा क्रियान्वयन के समय भारतीयों के सामाजिक व धार्मिक रीति-रिवाजों का सम्मान करने की बात कही गई।

इस सर्वोच्च न्यायालय को साम्य न्याय (law of equity) तथा सामान्य विधि (common law) के न्यायालय, जो सेना विधि के न्यायालय तथा धार्मिक न्यायालय के रूप में कार्य करता था सभी प्रजा चाहे अंग्रेज हो या भारतीय सुप्रीम कोर्ट तक पहुंच सकती थी। इस न्यायालय को यह भी अधिकार था कि यह कंपनी के सेवा तथा सम्राट की सेवा में लगे लोगों के विरुद्ध मामले, कार्यवाही अथवा शिकायत की सुनवाई कर सके। इस न्यायालय को इंग्लैंड में प्रचलित सभी न्यायिक विधियों के अनुसार न्याय करने के अधिकार दिए गए। इस न्यायालय

को प्राथमिक तथा अपील के अधिकार (original and appellate jurisdiction) की अनुमति थी। इस न्यायालय को अंग्रेजी परंपरा के अनुसार पंचों (Jury) की सहायता से मुकदमों की सुनवाई करनी थी। यह उच्चतम न्यायालय 1774 में गठित किया गया और सर एलीजाह इम्पे (Sir Elijah Impey) मुख्य न्यायाधीश तथा चैम्बर्स, लिमेस्टर और हाइड छोटे न्यायाधीश नियुक्त हुए।

कम्प अधिकारियों पर प्रतिबन्ध तथा मामोश सीमित करना –

रेग्यूलेटिंग एक्ट ने एक ईमानदार शासन का आधारभूत सिद्धान्त निश्चित किया कि "कोई व्यक्ति जो कम्पनी के अधीन सैनिक अथवा असैनिक पदाधिकारी हो वह किसी भी व्यक्ति से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कोई उपहार, दान, पारितोषिक इत्यादि नहीं ले सकता।

कंपनी के कार्यकर्ताओं के वेतन बढ़ा दिए गए। गवर्नर जनरल को £ 25,000, पार्षदों को £ 10,000 तथा मुख्य न्यायाधीश को £ 8,000 तथा छोटे न्यायाधीशों को £ 6,000 वार्षिक दिए गए जो सम्भवतः समकालीन सम्पूर्ण संसार के सबसे ऊँचे वेतन थे।

रेगुलेटिंग एक्ट के दोष —

(1) गवर्नर जनरल की संवैधानिक स्थिति : पार्षदों पर निर्भरता :—
रेगुलेटिंग एक्ट द्वारा एक गवर्नर जनरल तथा चार सदस्यों वाली एक परिषद का गठन किया गया था। ~~लेकिन~~ ~~पार्षदों~~ के अपरिषद गवर्नर जनरल का निर्णय बहुमत द्वारा होता था। तीन पार्षदों के बहुमत के समक्ष गवर्नर जनरल का कुछ नहीं चलता था उसे veto की शक्ति नहीं दी गई थी। कभी २ पार्षदों के बहुमत के समक्ष उसे झुकना पड़ता था। वह स्वेच्छा से कोई भी निर्णय नहीं ले सकता था। कभी २ पार्षदों का विचार इतना संकीर्ण होता था कि वे गवर्नर के निर्णयों

Teacher's Signature

का विरोध करते थे। अतः गवर्नर जनरल की फायदों पर निर्भरता ने दोनों के बीच सबाल पैदा कर दिया था।

(ii) प्रेसीडेंसियों की नीति की एकता का अभाव –
रेगुलेटिंग एक्ट से पूर्व सभी प्रेसीडेंसियों को अलग-अलग नीति निर्धारण का अधिकार था। उनकी नीतियों को समन्वित करने के लिए कोई सर्वोपरि अधिकार नहीं था। अधिनियम की इस त्रुटि को दूर करने के लिए अन्य प्रेसीडेंसियों को बंगाल के गवर्नर जनरल के अधीन कर दिया गया लेकिन कई ऐसे अपवाद भी थे जिनके आधार पर अधीनस्थ प्रेसीडेंसियों ने कई अवसरों पर स्वेच्छा से युद्ध-घोषणा कर कम्पनी

की प्रतिष्ठा को धक्का पहुंचाया और उसकी नीतियों को असंगत बना दिया।

(iii) सपरिषद गवर्नर जनरल और सर्वोच्च न्यायालय का सम्बन्ध अस्पष्ट — सपरिषद गवर्नर जनरल और सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार स्पष्ट नहीं थे फलस्वरूप दोनों संस्थाओं में निरंतर संघर्ष होते रहते थे। एक ओर गवर्नर जनरल ने मुगल-सम्राट से शक्तियां प्राप्त की थी जिसे ब्रिटिश संसद परिभाषित कर सीमित करती थी दूसरी ओर सपरिषद गवर्नर जनरल द्वारा बनाई गई विधियों को सर्वोच्च न्यायालय को रद्द करने का अधिकार प्रदान किया गया था। क्षेत्राधिकार संबंधी इस विरोधाभास के चलते

बंगाल में असामान्यता की स्थिति पैदा हो गई थी। श्री गुरुमुख निहाल सिंह के अनुसार " गवर्नर जनरल और सर्वोच्च न्यायालय के बीच संघर्ष चार मुख्य बातों के चलते थी। पहला, सर्वोच्च न्यायालय का दावा था कि ~~प्रजाओं~~ पर आदेश (writ) जारी करने का अधिकार उसे ही है, जबकि सपरिषद गवर्नर जनरल ने इस अधिकार की मांग की। दूसरा, अधिनियम के अनुसार सर्वोच्च न्यायालयों को कम्पनी के कर्मचारियों की जाँच-पड़ताल तथा न्यायिक निर्णयों का अधिकार दिया गया था, लेकिन यह अधिकार इतना अस्पष्ट था कि कम्पनी के कर्मचारी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे।

Teacher's Signature

Page No.
Date

की प्रतिष्ठा को धक्का पहुंचाया और उसकी नीतियों को असंगत बना दिया।

(iii) सपरिषद गवर्नर जनरल और सर्वोच्च न्यायालय का सम्बन्ध अस्पष्ट — सपरिषद गवर्नर जनरल और सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार स्पष्ट नहीं थे फलस्वरूप दोनों संस्थाओं में निरंतर संघर्ष होते रहते थे। एक और गवर्नर जनरल ने मुगल-सम्राट से शक्तियां प्राप्त की थी जिसे ब्रिटिश संसद परिभाषित कर सीमित करती थी दूसरी ओर सपरिषद गवर्नर जनरल द्वारा बनाई गई विधियों को सर्वोच्च न्यायालय को रद्द करने का अधिकार प्रदान किया गया था। क्षेत्राधिकार संबंधी इस विरोधाभास के चलते

Teacher's Signature

बंगाल में अराजकता की स्थिति पैदा हो गई थी, श्री गुरुमुख निहाल सिंह के अनुसार "गवर्नर जनरल और सर्वोच्च न्यायालय के बीच संघर्ष चार मुख्य बातों के चलते थी। पहला, सर्वोच्च न्यायालय का दावा था कि प्रजाओं पर आदेश (Writ) जारी करने का अधिकार उसे ही है, जबकि सपरिषद गवर्नर जनरल ने इस अधिकार की मांग की।

दूसरा, अधिनियम के अनुसार सर्वोच्च न्यायालयों को कम्पनी के कर्मचारियों की जाँच-पड़ताल तथा न्यायिक निर्णयों का अधिकार दिया गया था, लेकिन यह अधिकार इतना अस्पष्ट था कि कम्पनी के कर्मचारी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे।

Teacher's Signature

तीसरा, कम्पनी के न्यायिक अधिकारियों के सम्बन्ध में सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार का प्रश्न विवाद का विषय रहा। चौथा, सर्वोच्च न्यायालय ने प्रांतीय तथा देशी न्यायालयों के क्षेत्राधिकार को स्वीकार करने से इंकार कर दिया जिसके चलते कार्यकारिणी से उसका मतभेद अधिक तीव्र हो गया।

(iv) न्यायिक विधि की अस्पष्टता — सर्वोच्च न्यायालय के सम्बन्ध में यह स्पष्ट नहीं था कि न्यायिक प्रशासन में वह किस विधि का उपयोग करेगी। ब्रिटिश विधि को जाननेवाले अंग्रेज जज भारत की विधियों, रीति-रिवाजों तथा परम्पराओं से परिचित नहीं थे।

अतः भारतीयों के न्यायिक मामलों में के ब्रिटिश विधियों तथा प्रक्रियाओं का उपयोग करते थे।

गुरुमुख निहाल सिंह के अनुसार "इससे उनमें काफी क्षोभ तथा रोष पैदा हुआ। इसका परिणाम बहुत भयंकर होता अगर सपरिषद गवर्नर जनरल ने हस्तक्षेप नहीं किया होता तथा संसद ने 1781 का संशोधन अधिनियम पास नहीं किया होता।"

(V) कंपनी के गृह सरकार के संविधान में त्रुटिपूर्ण परिवर्तन – कंपनी के संचालक मंडल की कार्यावधि 1 वर्ष से बढ़ाकर 4 वर्ष कर दी गई। इसमें 24 सदस्य थे। जिसमें 1/4 सदस्यों को प्रतिवर्ष हट जाना था। अधिनियमों द्वारा यह नियम बना दिया गया कि 1800 पौंड से कम के शेयर

होल्डर संचालकों के चुनाव में मतदान नहीं कर सकते। इससे 1246 छोटे शेयर होल्डरों का मतदान का अधिकार छीन गया। फलतः कंपनी का संचालक मंडल (Court of Directors) एक स्थायी अल्पतंत्र (Permanent Oligarchy) में बदल गया। राबर्ट्स ने भी कहा है कि यह प्रावधान (संचालक मंडल के संविधान में परिवर्तन से सम्बन्धित) अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल रहा।

(vi) कम्पनी पर संसद का अपर्याप्त नियंत्रण —

सपरिषद गवर्नर-जनरल द्वारा संचालक मंडल को प्रेषित

सभी पत्रों को दो सप्ताह के अन्दर मंत्रालय के समक्ष रखा जाना चाहिए था लेकिन इन पत्रों को पूरी छानबीन करने के लिए कोई व्यवस्था नहीं की गई थी। अतः प्रदत्त पर संसद का नियंत्रण अपर्याप्त और प्रभावहीन ही रहा।

(5) ~~कमजोर~~ दुर्बल कार्यपालिका —

अधिनियम के अन्तर्गत दुर्बल कार्यपालिका की रचना की गई थी। सपरिषद गवर्नर जनरल में एकता तथा सजातीयता का अभाव था। उसमें निरंतर आंतरिक संघर्ष होता रहता था। कार्यकारिणी द्वारा सभी विधियों को सर्वोच्च न्यायालय की स्वीकृति आवश्यक थी।

अधिनियम का संवैधानिक महत्व –

अनेक त्रुटियों के बावजूद 1773 के रेग्युलेटिंग एक्ट का विशेष संवैधानिक महत्व है।

(1) इसने ईस्ट इंडिया कंपनी के राजनीतिक संगठन और राजनीतिक अधिकार को स्पष्ट कर दिया।

(ii) भारतीय मामलों पर ब्रिटिश संसद का नियंत्रण स्थापित करने की दिशा में यह पहला वैधानिक कदम था। इस अधिनियम द्वारा सर्वप्रथम एक यूरोपीय शक्ति ने यूरोप से बाहर प्रादेशिक क्षेत्र को शासित करने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया। इससे कंपनी के भ्रष्ट तथा कुशासन को समाप्त कर भविष्य में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया।

3) कंपनी के अधिकारी अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न कर सकें, इस उद्देश्य से उन्होंने कलकत्ते में एक उच्च न्यायालय को स्थापित कर दिया। इंग्लैंड में कोई भी सरकारी पदाधिकारी कानून की परिधि से बाहर नहीं था और वह अपने कार्यों के लिए साधारण न्यायालय में उत्तरदायी था।

प्रो० कीथ ने इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि "इस अधिनियम ने कंपनी की इंग्लैंड स्थित संस्थाओं के विधान में परिवर्तन

किया, भारत सरकार के स्वरूप में बहुत कुछ सुधार किए, कंपनी के समस्त विभिन्न भागों पर एक शक्ति का नियंत्रण स्थापित किया और किसी ऐसा तक कंपनी को ब्रिटिश मंत्रिमंडल की देखरेख में लाने का प्रयास किया।

वस्तुतः इस अधिनियम के सारे प्रावधान परीक्षण एवं संतुलन के सिद्धान्त पर आधारित थे। रेग्युलेटिंग एक्ट 11 वर्ष तक चलता रहा। फिर 1784 में इसके स्थान पर पिट्स इंडिया एक्ट पारित किया गया।